© 2017 IJSRST | Volume 3 | Issue 7 | Print ISSN: 2395-6011 | Online ISSN: 2395-602X
Themed Section: Science and Technology

भवभूति के नाटकों में सांस्कृतिक जीवन मूल्य

सुष्मिता सोनकर
(शोधच्छात्रा)
राष्ट्रीय संस्कृत संस्थान
(मा0वि0वि0) गंगा नाथ झा परिसर

किसी समाज की संस्कृति उसके भौगोलिक परिप्रेक्ष्य में उन अवयवों से निर्मित होती है जो वह अपने अस्तित्व को बनाये रखने के लिए विकास क्रम में अर्जित करती है। संस्कृति समाज के आन्तरिक संस्कारों का बाह्य स्वरूप होता है समाज की स्थिरता उसकी सांस्कृतिक जीवन मूल्यों पर निर्भर करती है। संस्कृति का आनन्द अन्तः करण को शक्ति प्रदान करता है।

जवाहर लाल नेहरू – अनुसार "संस्कृति जन समूह के जीवन से विभिन्न क्षेत्रों के प्रयासों का समस्त योग्य है।" व्यक्ति समाज एवं राष्ट्र की आन्तरिक समृद्धि उसकी संस्कृति है तो बाह्म भौतिक समृद्धि सभ्यता। इसलिए सभ्यता और संस्कृति एक दूसरे के विरोधी नही अपितु अनुपूरक है। समाज तथा राष्ट्र के बाह्य स्वरूप की रचना उसके भौतिक जीवन मूल्य करते है किन्तु आन्तरिक चेतना सांस्कृतिक मूल्यों से बनती है, ये सांस्कृतिक मूल्य ही उसकी ऊर्जा तथा प्राण शक्ति होती है। भवभूति के नाटकों में तत्कालीन सांस्कृतिक जीवन मूल्य पुरूषार्थ चतुष्य, षोडस संस्कार तथा राष्ट्रीय भावना से निर्मित होते है। किसी समाज या राष्ट्र की अन्तस् चेतना का विकास जिन अवयवों से होता है वे उसके सांस्कृतिक जीवन मूल्य का निर्माण करते है, भारतीय संस्कृति अति प्राचीन है, लोककल्याण, स्वाभिमान, उदारता समन्वय उपासना की स्वतंत्रता आशावादिता के साथ–साथ पूरूषार्थ चतुष्टय, जन्म से मृत्यु तक के विभिन्न संस्कार पूर्वजन्म, गुरूओं के प्रति आस्था के अवयव विद्यमान है।

(क) पुरूषार्थ चतुष्टय :– पुरूषार्थ चतुष्ट्य भारतीय सांस्कृति की प्रमुख विशेषता है चार प्रकार के पुरूषार्थ भारतीय संस्कृति में है – धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष। इन चार के अतिरिक्त संसार में कोई ऐसी वस्तु कोई सुख प्राप्तव्य नही, जो पुरूष के प्रयत्न के द्वारा प्राप्त योग्य हो, सबका पर्यवसान इन्ही चार में हो जाता है इन चार के बिना पुरूषार्थ के व्यक्ति अपूर्ण रहता है तथा उसका जीवन उसी तरह व्यर्थ है जैसे बकरी के गले का थन

धर्मार्थकाममोक्षाणां यस्यै कोऽति न विद्यते
अजागल स्तन स्यैव तस्य जन्म निरर्थकम्।।

स्दाचार रूपी वृक्ष चारो पुरूषार्थ को देने वाला है, धर्म उसकी जड़, अर्थ उसकी शाखा, काम उसका पुष्प और मोक्ष उसका फल है।

धर्मोस्य मूलं धनमास्य शाखा पुष्पं च कामः।
पुष्पं च कामः फलस्य मोक्षाः।।[1]

धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष की प्राप्ति का प्रथम सोपान है। धर्म से तात्पर्य उन शुभ कर्मों और गुणो से है, जिनसे व्यक्ति की सांसरिक एवं पारलौकिक उन्नति हो–

यतोऽभ्युदयनिः श्रेयससिद्धिः स धर्मः।[2] धर्म ही वह वस्तु है जिससे संसार स्थिर है तथा समाज का सुचारू रूपेण संचालन होता है। भवभूति के साहित्य में दो प्रकार के धार्मिक जीवन मूल्य है–

1 सामान्य धर्मपरक जीवनमूल्य 2. विशेष धर्मपरक जीवनमूल्य। सामाजिक धर्म परक जीवनमूल्य में मानवीय धर्म आते है– धर्म, क्षमा, मन को वश में रखना, चोरी न करना पवित्रता।, इन्दियों का दमन बुद्धि विद्या और क्रोध न करना ये दस धर्म के लक्षण है। भवभूति के नाटक महावीर चरित तथा उत्तररामचरित के राम इन गुणों से सम्पन्न है। सम धर्म रक्षक है। महावीर चरित के द्वितीय अंक में स्वयं माल्यवान कहते हैं कि – "निसर्गे स धर्मस्य गोप्ता, धर्मदुहो वयम्।[3] राम के धैर्य, क्षमा, क्रोध न करना आदि गुणों के कारण ही जामदम्न्य राम के बारे में कहते हैं – हे राम। हृदय की तरह तुम आकृति से भी सुन्दर हो तुम्हारे गुणों की रमणीयता अतर्क है, तुम मुझे सदा हदयंगम हो रहे हो–

राम राम नयनाभिरामता माश्यस्य सहशी समुदूहन्।

अप्रतथ्ये गुण रामणीयकः सर्वथैव हृदयंगमाऽसि में।।[4]

भवभूति स्वयं धार्मिक व्यक्ति थे। वैदिक धर्म में उनकी आस्था थी। वेद स्मृति सदाचार और अन्तरात्मा के अनुकूल आचरण में उनका विश्वास था।

भवभूति प्रत्येक वर्ण व आश्रम के लिए पृथक–पृथक निर्धारित धर्म में आस्था रखते थे, वे मानते थे कि ब्राम्हणों का धर्म ज्ञानार्जन है, और क्षत्रियों का धर्म समाज को धर्मानुसार नियमन।

अर्थ– अर्थ शब्द उन समस्य वस्तुओं का बोधक है जिनका उपयोग करके मनुष्य जीवित रहता है। कौटिल्य के अनुसार– राष्ट्रस्य मूलधर्मः उसी धन को अर्थ कहा जाता है जो धर्म सम्मत होता है। गीता में भगवान कृष्ण ने अन्याय से उपार्जित अर्थ संचय करने वालों की निन्दा की है। "ईहन्ते काम योगार्थमन्याये न नार्थ संचयमान्।।[5]

इस प्रकार अपनी आवश्यकता की पूर्ति के लिए अर्थार्जन धर्म परक होना चाहिए। इसलिए अर्थ को धर्म के बाद रखा गया है। भवभूति भी यही मानते है कि लोग कल्याण के लिए लगाये जाने वाला धन सार्थक होता है। अधर्म से प्राप्त अर्थ लम्बे समय तक स्थायी नही रहता। रावण ने सारी सम्पदा वैभव प्राप्त किया, किन्तु उसका उपयोग धर्म के द्वारा नियंत्रित नही इसलिए सारा वैभव और सम्पदा सामाप्त हो गया। महावीर चरित में षष्ठ अंक में लंका की अग्निदाह का चित्रण कवि ने किया है–

भ्रान्तीः सप्ताधिकानां..... सहपरिदलितोऽब्धोस्त्रि कूटेन लीढे।[6]

काम – इच्छा या कामना पुरूषार्थ की श्रेणी में आती है। इच्छा का पर्यावसान सुखमय होता है। धन, भवन आभूषण, पुत्र, कलम, नित्य, अन्न, क्रीड़ा, कला, शरीर, इन्दिय, मन, विद्या, यश सब कुछ सुख प्राप्ति के साधन संक्षेप में आनन्दोपलब्धि ही काम है।

गीता में कहा गया है–

धर्माविरूद्धो भूतूषु कामोऽस्मि भरतर्षभ।

भवभूति की सभी कामानाओं और क्रियाओं में धर्म और विधान को महत्व देते है। वर्ण के अनुसार कर्तव्य निर्धारित है, वहीं यज्ञ करना। क्षत्रियों का कार्य समाज की रक्षा करना तथा वर्ण व्यवस्था के सुचारू संचालन को बनाये रखना है।

इसलिए महावीर चरित में जामदम्न्य की अनीतिगत व्यवहार से प्रेरित होकर शतानन्द इन्हे भस्म करने की कामना करते है तो दशरथ इन्हे ऐसा करने से रोकते है। क्योंकि वर्ण व्यवस्था के अनुसार आचरण करवाने का दायित्व राजा का होता है। भवभूति के अनुसार काम धर्मानुशसिति होना चहिए। धर्म विहीन काम की लिप्सा व्यक्ति को रावण नन्दन बना देता है, जबकि धर्मपरक कामनायें व्यक्ति को राम, विश्वामित्र, वसिष्ठ जनक, तथा कामन्दकी बनाती है।

मोक्ष– मोक्ष को परम पुरूषार्थ माना गया है मोक्ष का अर्थ है छुटकारा या त्याग। "वाहनालक्षणंदुखम्'– न्यायसूत्र1–1–21 सदा के लिए सब प्रकार के दुःखों से पूर्णतः निवृत्ति मोक्ष कहा जाता है। वेदान्त दर्शन के अनुसार मोक्षावस्थापरमानन्द की प्राप्ति है।किन्तु न्याय वैशोषिक, सांख्य निवृत्ति को मोक्ष मानते है। उनके अनुसार वहॉ न दुःख का अनुभव होता है न आनन्द का।

गीता मे कहा गया है–

प्रजह्यति यदां कामान्सर्वन पार्थ मनोगताम्।

आत्मन्ये वात्मना तुष्टः स्थित प्रज्ञ स्तदोच्यते।।[7]

मोक्ष को लौकिक और पारलौकिक वस्तुओं के प्रति वैराग्य होता है तथा वह आत्म ज्ञानी होता है। उत्तरामचरित में भी दिव्य पुरूष शम्बूक के माध्यम से भवभूति ने इसी मूल्य की स्थापना की है।7

सत्संगजानि निधनान्यपि तारयन्ति।"[8]

(ख) षोडस संस्कार – संस्कारों का सामाजिक तथा पारिवारिक जीवन में विशेष महत्व है। संस्कार शब्द का अर्थ है परिष्कार अथवा सिद्धि संस्कारों की संख्या में विद्वानों में प्रारम्भ से ही कुछ मतभेद रहा है। गौतम स्मृति में 48, संस्कार, महर्षि अंगिरा ने 25 संस्कार, पारस्कर गृह्य सूत्र में 13, वैखानस गृह्य सूत्र में 18, आवश्वलायन गृह सूत्र में 11 संस्कार माने गये है। महर्षि व्यास द्वारा प्रमुख षोडश संस्कार प्रतिपादित किये गये है। महर्षि व्यास द्वारा प्रमुख षोडश संस्कार प्रति पादित किये गये है। ये संस्कार निम्न है।

1. गर्भाधान, 2. पुंसवन, 3. सीमान्तोन्नयन, 4. जातकर्म
5. नामकरण 6. निष्क्रमण, 7. अन्नाप्राशन 8.वपनक्रिया (चूडाकरण) 9. कर्णवेध,
10. उपयन(वृत्तादेश) 11. वेदारम्भ
12. वेदस्नान (समावर्तन) 13. विवाह 14.वानप्रस्थ परिगृह
15. संन्यास16 अन्तेष्टि।

भवभूति के नाटकों में इनमें से कुछि संस्कारों का उल्लेख प्राप्त होता है जिनका वर्णन उन्होन सांकेतिक उल्लेखों द्वारा वर्णित किया है।

प्राग्जन्म संस्कार – ये संस्कार गर्भ की अवस्था में सुयोग्य संतान प्राप्ति के लिए किये जाते है। भवभूति के नाटकों में इस संस्कारों का उल्लेख प्राप्त नही होता किन्तु कुछ संकेत अवश्य रेखांकित किये हैं। उत्तररामचरित में जन्म से ही लव–कुश को जृम्भकास्त्र की सिद्धि का संकेत भवभूति ने किया है। जृम्भकास्त्र की सिद्धि विश्वामित्र द्वारा राम को प्रदत्त की गई थी। लव–कुश को यह सिद्धि गर्भावस्था में संस्कारों द्वारा प्राप्त हुई थी।

बाल्यावस्था सम्बन्धी संस्कार – ये संस्कार शिशु के जन्म में होते ही सम्पादित किये जाते हैं तथा इसका उद्देश्य बल, आयु तथा तेज वृद्धि करना है जन्म से ग्यारवें दिन नामकरण संस्कार सम्पन्न किया जाता है। ये नाम दो या चार अक्षर वाले रखे जाते हैं उत्तरामचरित में लव–कुश का नामकरण देवों द्वारा किया गया।

चूड़ाकर्म संस्कार – बाल्मीकि ने अपने आश्रम में उन दोनो का चूड़ाकर्म संस्कार किया। इसे चॉल कर्म या मुण्डलन संस्कार भी कहते हैं। इसका अर्थ है 'शिखा रखना' अर्थात सिर के सभी बालों को काट दिया जाता है तथा थोडे बाल को छोडकर ।

शिक्षा सम्बन्धी संस्कार– शिक्षा सम्बन्धी संस्कारों में उपनयन वेदारम्भ और समावर्तन संस्कार आते है। भवभूति ने उपनयन और वेदारम्भ संस्कार को एक ही श्रेणी में रखा है। उपनयन संस्कार का अर्थ पास ले जाना इस संस्कार के बाद व्यक्ति वेदाध्ययन का अधिकारी हो जाता है। ब्राह्मण का उपनयन आठ वर्ष पूर्ण होने पर क्षत्रिय का ग्यारहवें वर्ष तथा वैश्य का बारह वर्ष में। भवभूति ने उत्तररामचरित में लव–कुश का ग्यारहवें साल में क्षत्रिय विधिसे वाल्मीति द्वारा उपनयन संस्कार कराये जाने का उल्लेख।

समनन्तरं च गर्भेकादशे वर्षे क्षत्रेण कल्पेनोपनीय गुरूणा त्रयीविधाम ध्यापितौ।[9]

केशान्त संस्कार– उपनयन के बाद ब्रह्मचारी गुरूकुल में वेदाध्ययन करता है और उस समय वह ब्रम्हचर्य का पूर्ण पालन करता है तथा उसके लिए समिश्रु मूज मेखलादि धारण करना अनिवार्य होता है। वेदाध्ययन पूर्ण होने पर ही गुरूकुल में ही केशान्त संस्कार सम्पन्न होता है।

आश्रम सम्बन्धी संस्कार – विवाह संस्कार, केशान्त संस्कार के बाद ब्रह्मचर्य विवाह के योग्य हो जाता है और वह गृहस्थ जीवन में प्रवेश करता है। विवाह संस्कार सर्वाधिक महत्वपूर्ण संस्कार है।

भवभूति के नाटकों में राम तथा उनके अनुजों का सीता तथा उनकी बहिनों के साथ विवाह का वर्णन, महावीर चरित में किया गया है साथी ही भवभूति ने मालतीमाधव के विवाह को केन्द्र मानकर एक पृथक प्रकरण मालतीमाधव की रचना की है। राम और सीता का ब्रह्य विवाह था, ब्रह्य विवाह में कन्या पिता विद्वान एवं शीलवान वर अपने यहॉ बुलाकर उसे वस्त्र अंलकार आदि से अलंकृत करके कन्यादान करता है।

अन्त्येष्टि संस्कार– यह संस्कार व्यक्ति की मृत्यु के समय किया जाता है म्रियामाण व्यक्ति की आसन्न मृत्यु के लक्षण प्रकट होते ही कतिपय कर्म प्रारम्भ कर दिये जाते है। भवभूति ने जटायु को राम के द्वारा अग्नि संस्कार किये जाने का वर्णन उत्तरामचरित में किया है। अग्नि संस्कार अन्तेष्टि का एक भाग है।

राष्ट्रीय भावना

राष्ट्र एक सांस्कृतिक अवधारणा है मां और मातृभूमि में एक ऐसी अलौकिक मेहिनी शक्ति है जो एक संवेदनाशील व्यक्ति को एक भावात्मक लगाव उत्पन्न कर देती है इसी भावनात्मक लगाव के कारण कवियों की रचनाओं में मातृभूमि का गान मिहित रहता है। भारत की अनुपम छटा से परिपूर्ण राष्ट्र रहा है। इसलिए कवियों ने राष्ट्र की इस प्रकृति का गान किया जाता है। भवभूति के नाटकों में भी कवि का अपने राष्ट्र के वनों, पर्वतों, नदियों और जनों तथा राज्य सत्ता से लगाव चित्र दृष्टिगत होते है। जिनसे भवभूति की राष्ट्रीय जीवन मूल्यों का ज्ञान हमें प्राप्त होता है।

अन्यादि– यज्ञ भारतीय संस्कुति का मूल्य है गीता में यज्ञ पर ही संसार को आधृत माना गया है।

सहयज्ञाः कृष्ण सृष्टवा पुरोवाच प्रजापतिः।

अनेन प्रसविष्यध्वयेष वाडेस्त्विष्ट कामधुक्।।[10]

इस प्रकार भवभूति संस्कारों को भारतीय संस्कृति का आधार मानते थे जिससे व्यक्ति का जीवन परिष्कृत हो कर सही जीवन मूल्य स्थापित हो सके। सोलह संस्कार का वर्णन प्रत्यक्षतः या सांकेतिक रूप से भवभूति के नाटकों में प्रस्तुत हुआ है।

सन्दर्भ संकेत

1. वामन पुराण – 14–16
2. वैशेषिक सूत्र – 1–22
3. महावी चरित – 2–7
4. महावीर चरित – 2/37
5. गीता – 16–12
6. महा0 चरि0 6–4
7. गीता – 2–55
8. उत्तररामचरित – 2/11
9. तदैव पृष्ठ – 153
10. गीता 3/10